आलोचना का परिप्रेक्ष्य

सम्पादक
रोहिताश्व

विद्या प्रकाशन
'सी' 449 गुजैनी, कानपुर-22

'आलोचना का परिप्रेक्ष्य' नामक प्रस्तुत पुस्तक यू०जी०सी० एकेडेमिक स्टाफ कालेज, गोवा विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आर्थिक सहयोग से हिन्दी पुनश्चर्या पाठ्यक्रम - 2005 हेतु प्रकाशित

ISBN : 81-88554-10-3

मूल्य : तीन सौ पचास रुपये मात्र

☛ पुस्तक	:	**आलोचना का परिप्रेक्ष्य**
☛ संपादक	:	रोहिताश्व
☛ प्रकाशक	:	**विद्या प्रकाशन** सी-449, गुजैनी, कानपुर - 22 ☎ : (0512) - 2285003 Mo. : 9415133173
☛ संस्करण	:	प्रथम, 2005 ई०
☛ मूल्य	:	Rs. 350.00
☛ शब्द-सज्जा	:	च्वाइस कम्प्यूटर ग्राफिक्स बर्रा, कानपुर
☛ मुद्रक	:	अजित आफसेट रामबाग, कानपुर

ALOCHANA KA PARIPREKSHYA

Edited By : Rohitashwa

17

उत्तरशती और त्रिलोचन का काव्य

✍ रवीन्द्रनाथ मिश्र

उत्तरशती के तमाम परिवेशगत शोर-शराबों के बीच प्रगतिशील विचारधारा के त्रयी कवि नागार्जुन, केदार और त्रिलोचन ने देशी ठाठ को ही अपनाए रखा । इनमें त्रिलोचन देशी संस्कार के बेबाक लोकधर्मी एवं उत्तर आधुनिकता की कृत्रिमता मायावी एवं बनावटी आडम्बर से दूर हिन्दी के जातीय गुणों को आत्मसात करने वाले रचनाकार हैं । फिर भी उत्तर आधुनिकता की जनचरित्री कविताओं की जाँच-पड़ताल इनकी रचनाओं को केन्द्र में रखकर की जा सकती है । विभिन्न साक्षात्कारों के दौरान इन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि मेरी आधुनिकता यूरोपीय न होकर भारतीय है । उत्तर आधुनिकता की प्रमुख प्रवृत्ति भूमण्डलीकरण एवं गाँवों के शहरीकरण के स्वरूप के आकलन हेतु इनकी कुछ कविताएँ बेहतर उदाहरण प्रस्तुत करती हैं ।

त्रिलोचन की कविता पर विचार करने के पूर्व थोड़ी-सी चर्चा उत्तरशती के विषय में कर लेना समीचीन होगा । प्रो. रणधीर सिंह का मानना है कि "उत्तर आधुनिकतावाद उपभोक्ता पूँजीवाद की विचारधारा से अधिक कुछ भी नहीं जो साहित्यशास्त्र की फटन और विखंडन तथा हमारे सारे विचार और ज्ञान को झुठला रहा है । इसके आगे उनका मानना है कि उत्तर आधुनिकतावाद जनतंत्र और शक्ति का विकेन्द्रीकरण, आर्थिक और सामाजिक न्याय, पर्यावरण, नारी आन्दोलन और यौन मुक्ति, मानवाधिकार और अल्पसंख्यकों के अधिकार जैसे हमारे समय के कुछ वास्तविक सरोकारों एवं अर्थों का उपयोग करता है; लेकिन सन्निहित समस्याओं का कोई प्रभावी उत्तर नहीं देता ।"

दरअसल सदी के अंत तक आजादी की अवधारणा ही बदल गई । आजादी के अर्थ हो गए मुक्त भोग, स्वायत्तता, स्वेच्छाचारिता, किसी भी कीमत पर अधिक से अधिक धन कमाना, विदेशी बैंकों में खाता और एन आर आई होना । आज की कविता भूमण्डलीकरण के इस दौर में बाजारवाद, उपभोक्तावाद, साम्प्रदायिक कट्टरता और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के तहत सांस्कृतिक एकरूपता के विरुद्ध किस तरह प्रतिवाद कर रही है । इसे 'जोखिम से कम नहीं' (ओम भारती), 'नीम रोशनी में' (मदन कश्यप), 'कटौती' (निलय उपाध्याय), 'हम जो नदियों का संगम हैं' (बोधिसत्व), 'मिट्टी का फल' (प्रेम रंजन अनिमेष) और कागज के प्रदेश में (संजय कुन्दन) जैसे काव्य संग्रहों की कविताओं में देखा जा सकता है ।

अरविन्द त्रिपाठी का मानना है कि आज कविता पर बहस उसके भविष्य पर नहीं बल्कि उसके अतीत और वर्तमान पर होनी चाहिए । अतीत और वर्तमान पर जब हम विचार करेंगे तभी भविष्य के रास्ते खुलते नजर आएंगे । इधर की कविता के वर्तमान रूप पर विचार करते हुए जो आसन्न चुनौतियाँ सामने खड़ी हैं उनसे टकराने की जरूरत है । ये चुनौतियाँ कवि की अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों स्तरों पर हैं । इधर प्रकाशित हुए वरिष्ठ और युवा कवियों के काव्य-संग्रहों, 'अतिरिक्त नहीं' (विनोद कुमार शुक्ल) 'वर्षा में भीगकर' (इब्बार रब्बी), 'एवजी में शब्द' (विनोद कुमार श्रीवास्तव) 'मगर एक आवाज' (लीलाधर मंडलोई) 'और जोखिम से कम नहीं' (ओम भारती) आदि को पढ़ते हुए समकालीन कविता के कई चेहरे उजागर होते हैं ।''

समाज में व्याप्त उपभोक्तावाद ने हमारी सहज मानवीय संवेदना को कितना अमानवीय और क्षत-विक्षत कर दिया है कि ऐसा लगता है कि हम सभी बाजार के बीच खड़े हैं जहाँ हर आदमी दूसरे आदमी को खर्च कर देने के लिए घात लगाए बैठा है । पहले यह काम क्रूर व्यवस्थाएँ किया करती थीं, अब यह काम बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ और उनके द्वारा फैलाया बाजार कर रहा है । इसका परिणाम यह हुआ कि हमारा गाँव भी इसकी गिरफ्त में आ गया है । त्रिलोचन के गाँव का सारा नक्शा ही बदल गया । चीर भरा पाजामा और किनारी वाली साड़ी की जगह, सुन्दर-सुन्दर कपड़े प्रयुक्त किए जा रहे हैं । हीरा-मोती बैलों की जगह ट्रैक्टर हनहना रहे हैं । होरी की गाय कहीं-कहीं देखने को मिलती है । कद्दा रस और आलू मटर की घुघूनी के स्थान पर चाय की चुस्कियों और पन्नियों का प्रयोग हो रहा है । 'पान पराग', 'लैला' और 'गोवा' नाम से तरह-तरह के गुटकें चल गए हैं । जिन्हें खाकर सैकड़ों युवक नशा और रोग के शिकार हो गए हैं । अब शाम होते ही बड़े-बूढ़े बच्चे और औरतें अलाव की जगह टी. वी. तापते हैं ।

किकुरी मारे जाड़ा थाम्हा जाइ
जउले नस-नस खून चलइ गरमाइ ।
जेकर तपता कबहूँ बरा धंधोर
अब केउ चितवत नाहीं तेकरी ओर ।

प्रस्तुत पंक्तियाँ त्रिलोचन के 'अमोला' काव्य संग्रह (90) में प्रकाशित से ली गई हैं । मानबहादुर सिंह का मानना है कि 'तपता जलाना वैसे ही ईधन का अपव्यय है- फिर 'धंधोर तपता' इस उपभोक्तावादी संस्कृति का कैसा सटीक प्रतीक है ।' इसी संग्रह में उत्तरशती के बढ़ते यांत्रिक प्रभाव से त्रिलोचन ने अपनी माटी की खुशबू को कैसे बचाकर रखा है ? इसका बड़ा बेबाक चित्रण किया गया है । पुर में नधे बैल, गर्रा खींचते लोग, बेड़ी उबहते ओहार, खेत निराती औरतें और फसल काटती मजदूरनों आदि के स्थान पर ट्यूबवेल एवं निराई तथा कटाई की मशीनों का प्रयोग हो रहा है। लेकिन इस यांत्रिकता के पीछे जो खोया है और जो सुरक्षित है, त्रिलोचन के पास वह

है भोले-भाले लोगों की हँसी, खेसकड़ी नोंक-झोंक भरी आत्मीयता । यंत्रों ने यहाँ वही सामूहिकता नष्ट की है । आपस की समझदारी गायब हो गई है । अपनी सुख-सुविधाओं को जुटाने में भागमभाग मची है । मनुष्य एक दूसरे को रौंदता हुआ स्व की पूर्ति में लगा है । सारे मानवीय मूल्य कुचले जा रहे हैं । यंत्रों के बीच रहते हुए हमारी मानवीय संवेदनाएँ मर गई हैं । हम भी कम्प्यूटर की भाँति कार्य कर रहे हैं । तीज-त्यौहारों की धूमधाम और हंसी मजाक गायब होते चले जा रहे हैं । मध्यवर्गीय अहं अब बाजार के हाथ में गीली मिट्टी है । उसका बुद्धिवाद पालतू हो चुका है और विवेक अंधा । आज सबसे अधिक अमीर और क्षमतावान वह है जिसके पास ज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी पर सबसे अधिक कब्जा है । एक समय था जब जमींदार और सबसे अधिक पूँजी के मालिक क्षमतावान माने जाते थे । सूचना क्रान्ति ने परिदृश्य बदल दिया । शिक्षा, चिकित्सा, व्यापार, मनोरंजन आदि सब इसकी गिरफ्त में आ गए हैं । इसके बिना अब कुछ भी सम्भव नहीं है ।

उत्तर आधुनिकता की इस भागमभाग जिन्दगी के बीच त्रिलोचन ने अपनी जमीन की महक को बचाए रखते हुए समसामयिक स्थितियों की ओर संकेत भी किया है । जिनकी कविताओं में कर्म और संघर्ष, नवजीवन दृष्टि, अपनत्व, गँवई संस्कृति की कर्मठता एवं जुझारूपन का ठोस रूप व्यक्त हुआ है । त्रिलोचन एक ऐसे आधुनिक कवि हैं, जो आधुनिकता की खाल को अस्वीकार करते हुए हिन्दी कविता की उस धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो हिन्दी कविता की जातीय चेतना की गहरी जड़ों को सींचती रही है । जिसके वे अखंड प्रेमानुरागी कवि हैं । इनकी कविताओं में दो गाँव दिखाई देते हैं - एक वे जो स्मृति शेष हो चुके हैं । दूसरे वे जो आज की मार-धाड़, स्वार्थ और अर्थोपार्जन की दौड़-धूप में अतीत से कट गए हैं । 1945 में प्रकाशित 'धरती' काव्य संग्रह की कविताएँ पुराने गाँव से सम्बन्धित हैं । जिसमें उत्तर आधुनिकता के पूर्व की ग्रामीण संस्कृति अपनी सजीवता के साथ विद्यमान है । जहाँ पैसे के स्थान पर आपसी प्रेम को महत्व दिया गया है । संग्रह की 'चम्पा काले-काले अक्षर नहीं चीन्हती' कविता में चम्पा अपने बालम को पैसा कमाने कलकत्ता नहीं जाने देती ।

चम्पा बोली : तुम कितने झूठे हो, देखा,
हाय राम, तुम पढ़-लिखकर इतने झूठे हो
मैं तो ब्याह कभी न करूँगी
और कहीं जो ब्याह हो गया
तो मैं अपने बालम को संग साथ रखूँगी
कलकत्ता मैं कभी न जाने दूँगी
कलकत्ते पर बजर गिरे ।

त्रिलोचन का दूसरा गाँव उत्तर आधुनिकता से प्रभावित है । जिसकी परख 1980 में प्रकाशित 'ताप के ताए हुए दिन' काव्य संग्रह की 'आरर डाल' कविता के माध्यम से की जा सकती है । इसमें पैसे के चक्कर में मजदूर को अपनी पत्नी तक की याद नहीं आती । पूँजी ने किस तरह हमारी मानवीय संवेदनाओं को तहस-नहस कर रख दिया है ।

सचमुच, इधर तुम्हारी याद तो नहीं आई,
झूठ क्या कहूँ, पूरे दिन मशीन पर खटना,
बासे पर आकर पड़ जाना और कमाई
का हिसाब जोड़ना, बराबर चित्त उचटना,
इस उस पर मन दौड़ाना, फिर उठकर रोटी
करना कभी नमक से कभी साग से खाना
आरर डाल नौकरी है, यह बिल्कुल खोटी
है इसका कुछ ठीक नहीं है आना आना ।

उत्तर आधुनिकता का बाजारवाद गाँव में हिंसा, कूटनीति, ईर्ष्या, द्वेष एवं आपसी फूट के रूप में उभरा है । पारिवारिक रिश्ते भी अर्थ के आधार पर मजबूत एवं कमजोर बन रहे हैं । कवि आपसी मिठास को बनाए रखने हेतु 'सबका अपना आकाश' (87) संग्रह की 'दीप जलाओ' कविता द्वारा उद्‌गार व्यक्त करता है -

इस जीवन में रह न जाय मल,
द्वेष, दम्भ, अन्याय, घृणा, छल
चरण चरण चल गृह कर उज्ज्वल
गृह-गृह की लक्ष्मी मुसकाओ
आज मुक्त कर मन के बंधन
करो ज्योति का जय का वंदन
स्नेह अतुल धन, धन्य यह भुवन
बन कर स्नेह गीत लहराओ ।

'उत्तर आधुनिकतावाद का मुख्य दबाव आधुनिकता की परियोजना का विघटन या विखंडन है । आधुनिकता का उद्‌गम हम ज्ञानोदय में देख सकते हैं । यद्यपि इसका नतीजा उन्नीसवीं शताब्दी में हासिल हुआ । तथाकथित ज्ञानोदय परियोजना का निरूपण बुद्धिवाद, औद्योगीकरण और ज्ञान तथा उत्पादन के प्रमाणीकरण में हुआ और उसका विश्वास रैखिक विकास एवं विश्वव्यापी परम सत्यों में था । आधुनिकता की परियोजना उसके ज्ञान और विज्ञान, उसके बुद्धिवाद, सर्वमुक्तिवाद और मानवतावाद आदि के विरुद्ध प्रतिक्रिया और नकार को ही उत्तर-आधुनिकतावाद माना जाता है ।' यह मान्यता प्रो. रणधीर सिंह की है जिसे कि उन्होंने 'अब' के शताब्दी अंक 2000-2001 में व्यक्त की है ।

इस शताब्दी के अन्तिम दशक में वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण और बाजारवाद का शोर सर्वत्र मचा है । आज त्रिलोचन, नागार्जुन और केदार के वर्ग संघर्ष की चर्चा नहीं है । इस समय कुछ फासीवाद शक्तियों का उदय हुआ है । जो कि आतंकवाद और धार्मिक उन्माद के बल पर सब कुछ प्राप्त करना चाहती हैं । इनके मूल में हैं धोखाधड़ी, अंधविश्वास, व्यक्ति पूजा, फरेब, लुभावने नारे, शक्तिपूजा, जातिवाद, युद्धवाद, अध्यात्मवाद, विकासवादी समाजवादी नारों, एकता, अनुशासन कानून व्यवस्था, राष्ट्रवाद और निरंकुशवाद आदि । दरअसल यह सिद्धान्त इंसानियत का सबसे बड़ा दुश्मन है । इस प्रकार के नारों से हमारी सामाजिक व्यवस्था का उचित विकास नहीं होगा । त्रिलोचन के 'भोरई केवट' और 'नगई महरा' की जीवन दशा यथावत बनी रहेगी । इन्हें देश एवं विदेश की गतिविधियों से कोई विशेष सरोकार नहीं है ।

इस अकारण पीड़ा का भोरई उपचार कौन-सा करता
वह तो इसे पूर्व जन्म का प्रसाद कहता था
राष्ट्रों के स्वार्थ और कूटनीति
पूँजीपतियों की चालें
वह समझे तो कैसे !
अनपढ़ देहाती, रेल-तार से बहुत दूर
हियाई का बाशिन्दा
वह भोरई ।

डॉ. वीरेन्द्र सिंह का अभिमत है कि "आज की कविता का चरित्र और चेहरा मूलतः जनवादी है जिसका सम्बन्ध भारत की साझा संस्कृति है । ऐतिहासिक दृष्टि से इसका एक रूप संतों और भक्तों में प्राप्त होता है, जिन्होंने अद्वैत दर्शन की भावभूमि पर जनवाद को अपने युग की सापेक्षता में अर्थ दिया तथा पतित और दलित वर्ग को केन्द्र में लाने का प्रयत्न किया । इस प्रवृत्ति का विकास आधुनिक काल में भारतेन्दु, निराला, मुक्तिबोध, नागार्जुन तथा त्रिलोचन आदि में भिन्न आयामों के साथ प्राप्त होता है ।"

त्रिलोचन की कविताएँ मजदूर एवं किसान जीवन के सुखों-दुखों, राग-विराग और उसके लोक जीवन की जिन्दगी से प्रामाणिक रूप से जुड़ी हैं ।

नगई खांची फांदे बैठा था
हाथों में वही काम
आँखें उन हाथों को
हथबट चिताती हुई
खांची में लगी एक आँख मुझे भी देखा
और कहा बैठो उस पीढ़े पर

साफ है मैंने कुछ ही पहले धोया है
बैठने पर मुझसे कहा,
अच्छा बाँच लेते हो रामायन ।

देखा जाए तो भारतीय मजदूर एवं किसान जीवन की कुल जमा-पूँजी अभाव ही है । इसमें भी वह अपनी लोक रामायणी संस्कृति को किस प्रकार बचाए हुए है । 'नगई कविता' में त्रिलोचन के काव्यानुभव की समृद्धथाती विद्यमान है । लोक जीवन के चित्रण के साथ-साथ कवि को उत्तर आधुनिकता के बढ़ते प्रभावों का भी ज्ञान है । पूँजी एवं बाजारवाद के कारण हम किस तरह एक-दूसरे से अलग होते जा रहे हैं । बाजारवाद किस तरह शहर से कस्बे और अब गाँव-गाँव तक पैर जमा चुका है ।

आजकल का ढंग ही विचित्र है
हमारे घर
जितने ही निकट निकट होते हैं
उतने ही दूर दूर
हमारे मन
होते हैं
यानी लगे हुए हम
कितने अलग-अलग हैं ।

बीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण की जटिल संवेदनाओं की रचनाओं को जहाँ समकालीन रचनाकार बिम्बों, प्रतीकों और मिथकों के माध्यम से व्यक्त कर रहे थे, वहीं त्रिलोचन अपनी लोकधुन में ही जीवन की छवि अंकित करने में मस्त थे । 'अमोला' काव्य संग्रह (90) में प्रकाशित हुआ । जो कि आंचलिक भाषा में लिखा गया है ।

तोहइं सङहती दिने-दिने छतियात
लखि लखि मोर करेजवा कांपत जात ।
तोहसें बिछुरे जिउ होई जाइ उदास
अउंतियाइ मन बिसरई भूख पियास ।

आपसी प्रेम एवं सद्भाव ही मनुष्य जीवन का मूल मंत्र माना गया है । साहित्य बाजार की संस्कृति के पक्ष से नहीं बल्कि मानव के पक्ष से बोलता है । त्रिलोचन के काव्य में प्रेम सर्वत्र विद्यमान है । जिस सूचना और तकनीकी क्रान्ति का गुणगान हम मुक्त कंठ से कर रहे हैं, उसकी भी सामाजिक एवं नैतिक जिम्मेदारी होनी चाहिए । इन्हें खुला सांड़ की भाँति छोड़ देने से अराजकता की स्थिति उत्पन्न होगी । बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ भारतीय मानसिकता को विदेशी बनाकर हमारी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक अस्मिता को छिन्न-भिन्न कर रही हैं । प्रसिद्ध समीक्षक मनमोहन का तो यहाँ तक मानना है कि "यह नयी दुनिया मायावी है और किसी के हाथ नहीं आने वाली । इस परम

निरपेक्ष स्वयंभू, स्वयं संचालित, स्वतः प्रमाण, महाठगिनी की सर्वशक्तिमानता और निर्विकल्पता को हम जितनी जल्दी स्वीकार कर लें और समर्पण कर दें अच्छा है । आगे उनका कहना है कि पिछले दिनों उदारवादी लक्ष्यों के लिए मध्यवर्गीय तबकों की संवेदनहीनता साफ-साफ देखी गई है और उनका एक नये किस्म के नकली, खोखले और भड़कीले राष्ट्रवाद में प्रशिक्षण लगातार चला है । पिछले दिनों सत्ता संगठन के महत्वपूर्ण सूत्र किस तरह दलालों और माफिया ऑपरेटरों के संगठित अपराधी गिरोहों के हाथ में आये हैं, यह बहुत साफ है ।"

उत्तरशती के दौर में बढ़ती हुई विभिन्न प्रवृत्तियों पर गम्भीरता से विचार करने का समय आ गया है । मेरे विचार से अच्छे साहित्य से ही इसकी रक्षा हो सकती है । साहित्य मनुष्य के आत्मजगत को उसकी भावशक्ति को संस्कारित करके उसे पाशविक होने से बचाता है । साहित्य नहीं होगा तो लोगों के लिए सामाजिक व्यवस्थाओं के वास्तविक रूपान्तरण और रख-रखाव की कोई प्रेरणा ही नहीं बचेगी । इसके अतिरिक्त तर्क, मूल्य और सौन्दर्यबोध का मानवीय स्रोत ही समाप्त हो जाएगा ।

आज के दौर में समाप्त होते हुए सामाजिक एवं अन्य परिवेशगत मूल्यों की रक्षा के लिए हमें कबीर तुलसी, भारतेन्दु, निराला, नागार्जुन और त्रिलोचन के साहित्य का पुनर्मूल्यांकन करना ही होगा ।

सन्दर्भ सूची

1. धरती काव्य संग्रह 45 : त्रिलोचन
2. ताप के ताए हुए दिन 80 : त्रिलोचन
3. उस जनपद का कवि हूँ 81 : त्रिलोचन
4. अरघान 83 : त्रिलोचन
5. फूल नाम है एक 85 : त्रिलोचन
6. सबका अपना आकाश 81 : त्रिलोचन
7. अमोला 90 : त्रिलोचन
8. लेखक की रोटी : मंगलेश डबराल
9. सापेक्ष 38.1996 : सं. महावीर अग्रवाल
10. सं. नामवर सिंह : आलोचना जनवरी-मार्च, 2001
11. सं. अभय : अब शताब्दी अंक 2000-01
12. संचेतना-मार्च 02 पूर्णांक 151
13. राजेन्द्र यादव : हंस - फरवरी-अक्टूबर-नवम्बर, 01
14. नया पथ - स्वाधीनता विशेषांक - जुलाई-सितम्बर, 1997

□□□□□